Original Article
ISSN (Online): 2582-7472

ShodhKosh: Journal of Visual and Performing Arts
July-December 2023 4(2), 2362–2364

अहिन्दी प्रदेश पंजाब की हिन्दी लेखिकाओं के उपन्यासों में विद्रोह' का स्वर

डॉ नीना मित्तल[1]

[1] एसोसिएट प्रोफेसर, हिंदी प्रेमचंद मारकंडा एस डी कॉलेज फॉर वूमेन, जालंधर

DOI
10.29121/shodhkosh.v4.i2.2023.3802

Funding: This research received no specific grant from any funding agency in the public, commercial, or not-for-profit sectors.

Copyright: © 2023 The Author(s). This work is licensed under a Creative Commons Attribution 4.0 International License.

With the license CC-BY, authors retain the copyright, allowing anyone to download, reuse, re-print, modify, distribute, and/or copy their contribution. The work must be properly attributed to its author.

OPEN ACCESS

ABSTRACT

इस लेख में पंजाब की हिन्दी लेखिकाओं के उपन्यासों में नारी-विद्रोह की प्रवृत्तियों का विश्लेषण किया गया है तथा महिला उपन्यासकारों द्वारा नारी के विद्रोही स्वरूप को प्रस्तुत किया गया है, जो पितृसत्तात्मक समाज द्वारा आरोपित मानसिकता और सामाजिक बौनेपन से मुक्ति की खोज में है। नारी-विद्रोह का यह दर्शन भारतीय समाज में नवजागरण काल की देन है और नारी-दमन के प्रति एक प्रतिक्रिया है।पहले यह विद्रोहपारिवारिक बंधनो के कारण मूक रहा पर स्वतंत्रता के बाद, नारी चेतना और अधिकारों में वृद्धि ने इस विद्रोह को सक्रिय रूप दिया। लेखिका ने यह भी बताया है कि महिला उपन्यासकारों ने नारी वेदना को व्यक्त करते हुए समाज में जागृति लाने का कार्य किया है, जिससे नारी को पुरुषों के समान संवैधानिक और कानूनी अधिकार प्राप्त हुए।, यह लेख में नारी-विद्रोह की जटिलताओं और उसके विकास को आँका गया है जो न केवल साहित्य में, बल्कि समाज में भी महत्वपूर्ण परिवर्तन लाने का माध्यम बना है।

Keywords: नारी-विद्रोह, महिला उपन्यासकार, पितृसत्तात्मक समाज, नवजागरण, नारी-दमन, मूक विद्रोह, स्वातन्त्र्योत्तर काल, नारी चेतना, संवैधानिक अधिकार, साहित्य जगत

1. INTRODUCTION

नारी-विद्रोह की शुरुआत तो उसी दिन हो गई थी जिस दिन हिन्दी की अनाम लेखिकाओं ने साहित्य जगत् को उपन्यास दिए थे। किन्तु युगीन पारिवारिक दबावों, सामाजिक षड्यन्त्रों, संवैधानिक अनुपलब्धियों के कारण यह विद्रोह मूक विद्रोह था। महिला उपन्यासकारों ने आज नारी के उस रूप को अपने उपन्यासों का विषय बनाया है, जहां वह अन्तर्द्वन्द्व की कमज़ोर, निराशावादी, मानसिक स्थिति का बहिष्कार कर विद्रोही की गुस्सैल मुद्रा में दिखाई देती है। उसका यह अस्त्र पितृसत्तात्मक समाज द्वारा आरोपित सामाजिक बौनेपन और दोयम दर्जे की स्थिति से उसे मुक्ति दिला रहा है। मूलतः विद्रोह का यह दर्शन भारतीय परिवेश की अनिवार्यता है, नवजागरणकाल की देन है, नारी-दमन की प्रतिक्रिया है।

स्वतन्त्रता के बाद नारी चेतना और नारी के सर्वक्षेत्रीय अधिकारों के जो द्वार खुले, उन्होंने इस विद्रोह को सक्रिय बनाया। उसके बाद मानो उपन्यास जगत् में महिला उपन्यासकारों ने अधिकार ही जमा लिया और नारी को वेदना से निजात दिला कर सक्रिय विद्रोह को जागृति प्रदान की। अपने विद्रोही प्रयासों और अनेक समाजसुधारकों राजा राममोहन राय, ईश्वर चंद्र विद्यासागर, स्वामी दयानन्द, महात्मा गाँधी आदि के अथक प्रयत्नों से आज की नारी ने पुरुष के समान संवैधानिक और कानूनी अधिकार प्राप्त किए। व्यक्तित्व की विराटता एवं.विशिष्टता जो पुरुष का एकाधिकार एवं बपौती था, वही सही मायनों में नारी ने प्राप्त किया। उसके इसी रूप के कारण पुरातन मूल्यों का विघटन हुआ तथा मानव मूल्यों को नई अर्थवत्ता प्राप्त हुई। स्त्री और पुरुष दोनों वर्गों के मध्य समानता की भावना नए परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत हुई, जो प्राचीन अर्द्धनारीश्वर की भावना के समकक्ष ठहरती थी। स्वतन्त्र भारत में दूसरी दुनिया के इस प्रगतिशील देश में नर-नारी के सम्बन्ध प्रतिद्वन्द्वितापूर्ण होते गए व दृष्टि शंकालू होती गई।उच्च स्वर में विद्रोह का उद्घोष करते हुए महिला उपन्यासकारों ने कलम के माध्यम से नारी के आन्तरिक दुःखों को अभिव्यक्ति देते हुए पुरुष वर्ग की परम्परित विचारधारा एवं नारी शोषण में सहभागिनी बनती नारी को भी अपनी लेखनी की तीक्ष्ण नोक से प्रताड़ित किया है।

इन उपन्यास लेखिकाओं ने विद्रोह दर्शन की मूल भावना का विश्लेषण बौद्धिक योग्यता, स्वाधीन चिन्तन, विवेकयुक्त वैज्ञानिक दुष्टिकोण से परिपूर्ण नारी को केन्द्रबिन्दु बना कर कुछ ऐसे किया है कि सर्वत्र आदर्श विनिर्मुक्त नारी की सप्रश्न मुद्राएं ही दिखाई देती हैं।

वर्जनाओं, बर्बरताओं और क्रूरताओं के निरन्तर आघात के फलस्वरूप नारी जीवन में उसके स्वकी रक्षा के लिए विद्रोह एक ढाल बनकर आया है। "सामन्तवादी अत्याचारों से कराहती नारी प्रतिक्रिया स्वरूप जिस प्रकार विद्रोहिणी बनकर पुरुष के अहम् को चुनौती दे रही है, इसकी यथार्थपरक अभिव्यक्ति महिला उपन्यासकारों ने बड़ी मार्मिकता से की है। ये सभी उपन्यास लेखिकाएँ जागरूक एवं बुद्धिजीवी नारियां हैं, जिनमें से कुछ ने स्वतन्त्रतापूर्ण भारत में नारी की सिसकती हुई आत्मा को देखा है और स्वयं पुरुष के शोषण परक स्वामित्व दंश को भोगा है"।'

शिक्षा प्रसार, पाश्चात्य प्रभाव, संवैधानिक समानाधिकार एवं आर्थिक आत्मनिर्भरता के बावजूद भी बुद्धिजीवी नारी अब तक एक सम्पूर्ण व्यक्तित्व के रूप में, एक स्वतन्त्र इकाई के रूप में पुरुष प्रधान समाज में अपनी पहचान नहीं बना पाई है। वह अभी भी पुरुषात्रिंत है। महिला उपन्यासकारों का लेखन, व्यवस्था के प्रति रोष को प्रकट करता है। उनकी रूचि अब यात्रा में है, पड़ाव में नहीं, तलाश में है, मंजिल में नहीं. जीवन में है, मृत्यु में नहीं। मृदुला गर्ग इस सम्बन्ध में कहती हैं", हर सफल पुरुष लेखक के पीछे एक नारी होती है, हर लेखिका के पीछे कई नहीं तो एक पुरूष अवश्य रहता है, जिसके कारण नहीं, जिसके बावजूद वह लेखन करती है।""

हमारे समक्ष हिन्दी साहित्य की उपन्यास लेखिकाओं के अनेक सशक्त हस्ताक्षर हैं, जिन्होंने हिन्दी जगत को अमूल्य निधियां प्रदान की हैं। अहिन्दी प्रदेशों में पंजाब की सोंधी महक में जन्मी पली, बड़ी हुई अनेक उपन्यास लेखिकाएं, भी उपन्यास के विस्तृत क्षेत्र में अग्रगण्य हैं। कृष्णासोबती, कुसुम अंसल, राजी सेठ, सुषम बेदी, सिम्मी हर्षिता इत्यादि वह प्रमुख लेखिकाएं हैं जिनकी उत्कृष्ट उपन्यास रचनाओं के माध्यम से आज उन्होंने हिन्दी साहित्यकाश में पंजाब को गौरवान्वित किया है। कृष्णासोबती के बहुचर्चित उपन्यास है-मित्रो मरजानी' 'सूरजमुखी अंधेरे के', जिन्दगीनामा, दिलोदानिश' आदि। इसी प्रकार कुसुम अंसल का 'उसकी पंचवटी', राजी सेठ के तत्सम्' एवं 'निष्कवच', तथा सुषमबेदी के 'हवन', 'लौटना', 'कतरा दर कतरा' एवं इतर' और सिम्मी हार्षिता के 'सम्बन्धों के किनारे' व 'यातना शिविर' इत्यादि वे प्रमुख उपन्यास हैं जिनमें नारी विद्रोह का उद्घोष स्वर मिलता है।

नारी शोषण की परम्परा को द्रोपदी के चीर की भांति खींचते चले जाने का दायित्व किसी नाते-रिश्ते का मोहताज नहीं। वह कोई भी हो सकता है बेशक अपनी संतान भी। नारी चाहे मां हो या सास, बहन, बेटी हो या पत्नी उसके सत्य को उबलती हुई कड़ाही में छोड़ दिया जाता है। पल-पल उसकी अग्नि परीक्षा होती है। उसके पास उत्तरों से अधिक प्रश्न रह जाते हैं, लेकिन आज उन्हीं पारिवारिक रिश्तों के मध्य अनेक रूपों में विभाजित नारी ने भय और मर्यादा की बेड़ियों को ध्वस्त करके, विद्रोह का लौहदण्ड हाथ में ले लिया है। अपने स्वाभिमान की दिपदिपाती हुई लौ में उसने पत्नीत्व की दुहाई देते हुए पुरुष के स्वामित्व के समक्ष पतली डाल के समान झुकने से इंकार कर दिया है।

कृष्णा सोबती के उपन्यास 'मित्रो मरजानी' की दबंग मित्रो पितृसत्तात्मक समाज में मूल्य मर्यादाओं की प्राचीन नीवों और शहतीरों को हिलाते हुए और पुरुष प्रदत्त सामाजिक छवि का तिरस्कार करते हुए पति से यौन-अतृप्ति पाकर पारम्परिक स्त्री के विपरित विद्रोह का स्वर बुलन्द करती है। सास से ऊंची आवाज़ में कहती है, "अम्मा ! अपने पहलवान बेटे को किसी वैद्य, हकीम के पास ले जा। यह लीला उसके वश की नहीं।"

पति के जीवन में दूसरी औरत का प्रवेश असह्य होते हुए भी स्वयं दूसरे पुरूष के कारण अपने दाम्पत्य के प्रति विद्रोह की घोषणा कर वह पुरुष को उसी के अस्त्र से ही घायल कर रही है। सुषम बेदी के उपन्यास 'लौटना' में मीरा अपने अंतर्मन की गहराई से जीना चाहती है। जीवन में उपलब्धि के लिए संघर्ष करती हुई विद्रोह स्वरूप अपनी जिजीविषा प्रकट करती हुई कहती है.-"मैं जिंदगी में बहुत कुछ कहना चाहती हूं। एक गृहस्थी बसा लेना मेरी जिंदगी का मकसद कतई नहीं हो सकता। दरअसल हिन्दुस्तान में हर लड़की की ट्रेजिडी उसकी शादी के दिन के दिन से शुरु होती है। मैं अपनी जिंदगी को ट्रेजिडी में नहीं बदलना चाहती। मेरे लिए शादी बेड़ियां या किसी तरह का बंधन न होकर मनचीते पुरुष के साथ जीवन को बांटते हुए जीने का सुखद अवसर है।""

अनेक परिवारों का सामूहिक रूप ही समाज का निर्माण करता है। परिवार के बंधनों की उपेक्षा करते-करते अब समाज की कटूक्तियों का सामना करने का अदम्य साहस भी उसके हृदय में आ गया है।

सिम्मीहर्षिता के उपन्यास 'सम्बन्धों के किनारे' में हरतेज अपने जीवन के अलगाव उसकी अच्छाइयों, उसकी बुराइयों को अपनी स्तर पर ही जीना चाहती है। वह परिवार और समाज दोनों से ही विद्रोह करती है।

सिम्मी हर्षिता के ही दूसरे उपन्यास 'यातना शिविर' का समराग दूसरा विवाह करके बच्चे पैदा नहीं करना चाहता। उसकी मां इस समस्या का समाधान कर देती है- "जो तू चाहे उसे दे और जो तू न चाहे उसे न दे।" इस पर छोटी बहू विद्रोह करती है-"अर्थात् आप अपनी इच्छा और स्वार्थ की दृष्टि से एक औरत से वह नारी सुलभ अधिकार छीन लेना चाहते हैं जो उसे प्रकृति ने आपसे बिना पूछे, बिना आपसे राय लिए दिया है। आप यह चाहते हैं कि वह दूसरी औरत सारी जिंदगी दूसरी मां, सौतेली मां बनी रहे, केवल माँ कभी न बने, इस घर का कोई कोना उसका अपना न हो जिसे वह मनचाहे ढंग से संवार सके.

वह कुप्रथाएं व कुरीतियां जिनके कारण सामाजिक यातनाएं उसे खुलकर सांस भी नहीं लेने देती थीं। आज नारी उनका कड़ा विरोध करके स्वयं को तो उस आघात से बचा ही रही है बल्कि कुविचारों, कुपरम्पराओं के प्रदूषण से समाज की रक्षा भी कर रही है। दहेज प्रथा और वैधव्य की प्रताड़नों के समक्ष आज उसने विद्रोह की ढाल अपना ली है। अपने उपन्यास 'यातना शिविर' में सिम्मी हार्षिता दहेज प्रथा के विरूद्ध व्यंजना प्रधान शैली में लिखती हैं- "नारी! तुम केवल श्रद्धा हो" का सच्चा व्यावहारिक अर्थ तो मुझ जैसी अनुभवी और भुक्तभोगी औरत ही समझ-समझा सकती है जो इस प्रकार है-हे नारी तुम जब ससुराल जाओ तो अपने साथ ढेर सारी आर्थिक श्रद्धा अवश्य लेकर जाओ। इसी लिए तो विवाह के बाद औरत को लक्ष्मी कहा गया है। केवल भावात्मक बेदाम श्रद्धा में किसी ससुराल का काम न कभी चला है और नहीं चल सकेगा।"" आगे वह लिखती है... ...औरत का आग के साथ युगों पुराना संबंध है। कभी पाक कला के रूप में, कभी सीता के रूप में, कभी जौहर के रूप में और अब होलिका दहन के बदले दहेज दहन के रूप में।""

जिस समाज में नारी को ही इतना पराधीन, हीन और उपेक्षित माना गया था, नारी के प्रति अत्यन्त अनुदार दृष्टिकोण रखा गया था, उस समाज में विधवा की क्या स्थिति हो सकती थी।

आधुनिक नारी जो कि जीवन का हरकदम अपने आत्मविश्वास के साथ तय करती है। अपने जीवन के दु:खद मोड़ पर भी उसका आंचल नहीं छोडती। वह वैधव्य के लिए चयनित मर्यादाओं, निषेधों का उल्लंघन करके उनका विद्रोह करके विश्वास के साथ जीवन बिता रही है। कृष्णा सोबती के उपन्यास 'दिलो दानिश में' कृपानारायण की छोटी बहन छुन्ना विधवा है। लेकिन वह साहसी है। सारा परिवार उससे वैधव्य के नियमों के पालन करने की अपेक्षा रखता है पर वह विद्रोहिणी है, वह सोचती है- "अपने से उम्मीद यही की जाती है कि पूजा ध्यान में दिल लगाएं। व्रत करें, तीर्थों को जाएं। पहनने ओढ़ने की मुहामियत। अपने अंदर बाहर की तरंगों को शांत कर भक्तिभाव से विधवा बन जाएं। हम अड़े हैं कि कुछ भी कहिए, हम बिना किनारे की सफेद धोती न पहनेंगे। जो हुआ सो अपने हाथ में न था। सन्यासिन बनकर मथुरा जी में बैठने से रहे। करें भी तो क्या करें।"

धार्मिकता और ईश्वरीय सत्ता की नवीन परिभाषा भी आधुनिक नारी अपने ढंग से निर्मित करती है। दंगे, आतंकवाद और उग्रवाद की निंदा और उसके प्रति विद्रोह भी आज की नारी की दबंगता का परिचायक है। उसके वैवाहिक सम्बन्धों में आने वाला बदलाव भी आधुनिक लेखिकाओं की कलम से अछूता नहीं है। दाम्पत्येत्तर समबन्धों के लिए भी वह विद्रोह कर रही है। चाहे वह सम्बन्ध प्रेमिका का हो, वेश्या का या रखैल का हो या फिर गर्भ धारण की बात हो, आज उसका रवैया चुनौतीपूर्ण है। यौन जीवन का वर्जित फल सहजरूप में ग्रहण करने के कारण जो स्थितियां जीवन में भयावहता का निर्माण करती थी उसे आत्महत्या करने के लिए विवश कर देती थी। नारी ने आज उन्हीं का उपहास उड़ाना शुरु कर दिया। साहित्य में इसे ट्रेजिक कामदी का नाम दिया गया है।

कुसुम अंसल के उपन्यास 'उसकी पंचवटी' में साधवी अपने जेठ विक्रम के प्रति सम्मोहित है। वह उसका अंश अपने गर्भ में धारण करती हुई अत्यन्त सुखद अनुभूति महसूस करती है""

विद्रोह का वास्तविक सम्बन्ध मन से है। अपनी विषम परिस्थितियों, विवशताओं के प्रति उपजी प्रतिक्रया जब विद्रोह का रूप धारण कर लेती है तभी बाह्य जीवन में उसके चिन्ह दिखाई देते है आज की नारी मानसिक रूप से विद्रोह के लिए कटिबद्ध हो चुकी है। आत्मपीड़न, परपीड़न, इलैक्ट्रा, इडिपस, काम कुंठाओं के द्वारा उनके स्तरों पर उसका विद्रोह परिलक्षित होता है। राजी सेठ के उपन्यास 'निष्कवच' मेंआत्मपीड़न के रूप में मां अपना विद्रोह प्रकट करती है "अब सुनेगा.....तू सुनना चाहेगा, कांच हो गई थी निरा कांच तेरी फोटो देखते-देखते ।"१०

आत्मनिर्भरता व स्वावलम्बन ही आज नारी का ध्येय बन चुका है। वह घर के साथ-साथ बाहरी जगत् पर अपना अधिकार जमा चुकी है। वह धन के अभाव से मुक्ति पा चुकी है। लेकिन इन उपलब्धियों के लिए हर समय उसे तनावों व संघर्षों से दो चार होना पड़ता है, विद्रोह के परचम को लहराना पड़ता है। बाह्य जगत् में अपना सिक्का जमाने के पश्चात् वह निर्भीक हो चुकी है। भ्रष्टाचार, अत्याचार, शासनव्यवस्था व राजनीतिक ढांचे के विरूद्ध भी वह विद्रोह कर रही है। यद्यपि आज की नारी घर व बाहर दो पाटों में पिसने के कारण अपने पर्स में अनेक समस्याएं समेटे हुए है तथापि वह मुक्ति पथ पर अग्रसर है; संघर्ष कर रही है। वह समाज में अपनी गिरती हुई अवस्था को ऊंचा उठाने के लिए संघर्ष का बीड़ा उठा रही है। वह केवल समानता का अधिकार चाहती है। पुरुष से उसकी कोई शत्रुता नहीं है, वह उसका संरक्षण व प्रेम खोना नहीं चाहती, वह मित्र के रूप में उसका हाथ थामना चाहती है क्योंकि विद्रोह का मार्ग बीहड़ है, कंकर पत्थरों से भरा है, तनावों की पोटली है, वह इससे मुक्ति तो चाहती है परन्तु अपनी अस्मिता की कीमत पर हरगिज़-हरगिज़ नहीं।

ACKNOWLEDGEMENT

None.

CONFLICT OF INTEREST

None.

संदर्भ ग्रन्थ सूची

डॉ. नीलम गोयल, स्वातंत्र्योत्तर हिंदी लेखिकाओं के उपन्यासों में अलगाव , अमृतसर, गुरु नानक देव विश्वविद्यालय, 1987
महिला उपन्यासकारों में सामाजिक चेतना-नारी के संदर्भ, उद्धृत-सारिका 16-30 अक्तूबर अंक, 1984, पृ० 48.
कृष्णा सोबती, मित्रो मरजानी, नई दिल्ली, राजकमल प्रकाशन, 1966, पृ०
सुषम बेदी, लौटना, दिल्ली; पराग प्रकाशन, 1994, पृ० 23-24.
सिम्मी हर्षिता, यातना शिविर, नई दिल्ली, अभिव्यंजना प्रकाशन, 1990, पृ० 153.
वही, पृ० 26.
वही पृ० 178
कृष्णा सोबती, दिलो दानिश , दिल्ली, राजकमल प्रकाशन, 1993, पृष्ठ 56।
कुसुम अंसल, उसकी पंचवटी, दिल्ली: पंजाबी पुस्तक भंडार, 1977, पृ० 68.
राजी सेठ, निष्कवच, नई दिल्ली: भारतीय ज्ञानपीठ, प्रसं० 1995, पृ० 113.